जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

धीर-वीर साधु-संतों का धर्म तो एकमात्र ध्यान ही है,ध्यान की अवस्था में ही केवलज्ञान होता है, अनन्त सुख की प्राप्ति होती है।
ह्न शा.तीर्थधाम सम्मेदशिखर, पृष्ठ : 22

वर्ष : 27, अंक : 17 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
दिसम्बर (प्रथम)2004 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

भ. महावीर निर्वाणोत्सव सानन्द सम्पन्न

1. देवलाली (नासिक-महा.) : यहाँ श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट द्वारा भगवान महावीर निर्वाणोत्सव के शुभ अवसर पर दिनांक 9 नवम्बर से 13 नवम्बर, 2004 तक विधान एवं शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर देश-विदेश में ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर के प्रात: एवं रात्रि में प्रवचनसार ग्रन्थ के 86 वीं गाथा पर मार्मिक प्रवचन हुये तथा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर आदि विद्वानों का भी समागम प्राप्त हुआ।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा कराये गये।

2. जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 12 नवम्बर, 2004 को भगवान महावीरस्वामी निर्वाणोत्सव के शुभ अवसर पर त्रिमूर्ति जिनालय में प्रात: अभिषेक एवं पूजन के पश्चात् पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल का दीपावली पर विशेष व्याख्यान हुआ।

श्री दिग. जैन तेरापंथी बड़ा मंदिर, घी वालों का रास्ता में दीपावली की पूर्व संध्या पर पण्डित संजीवकुमारजी गोधा का विशेष व्याख्यान हुआ। अहिंसा के उपदेशदाता भगवान महावीरस्वामी के निर्वाण दिवस पर 20 बच्चों ने फटाके नहीं फोडने की प्रतिज्ञा ली; जिन्हें 13 नवम्बर को पुरस्कृत किया गया।

3. जबेरा (म.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन मंदिर में प्रात: विशेष पूजन का कार्यक्रम रखा गया तथा दोपहर में 'दीपावली पर्व क्यों ? एवं दीपावली पर्व की सार्थकता' विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया।

गोष्ठी में श्री टोडरमल दि. जैन सि. महा. के 6 छात्रों एवं तीर्थधाम मंगलायतन के 3 छात्रों द्वारा विचार व्यक्त किये गये। प्रात: एवं रात्रि में पण्डित विनोदजी जैन एवं पण्डित कमलकुमारजी जैन के दीपावली पर प्रवचन का लाभ मिला।

4. शिरडशहापुर : यहाँ प्रात: सामूहिक पूजन के पश्चात् पण्डित प्रशांतजी काले द्वारा दीपावली पर्व पर विशेष प्रवचन तथा रात्रि में अष्टपाहुड ग्रन्थ पर प्रवचन हुआ।

5. शाहगढ़ (म.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन मंदिर में त्रिदिवसीय कार्यक्रम के अन्तर्गत दि. 12 नवम्बर को पण्डित राजेशजी शास्त्री, शाहगढ़ का पर्व पर विशेष व्याख्यान हुआ। दि. 13 नवम्बर को 'भगवान महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ' विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया; जिसमें पण्डित राजेशजी शास्त्री, पण्डित माधवजी शास्त्री, पण्डित प्रमोदजी शास्त्री, पण्डित सुनीलजी शास्त्री, पण्डित सौरभजी शास्त्री तथा सचिनजी, अनुभवजी एवं सुधीरजी ने अपने विचार व्यक्त किये।

दिनांक 14 नवम्बर को अक्षयनिधि कार्यक्रम का आयोजन किया गया तथा मुमुक्षु मण्डल द्वारा पुरस्कार वितरित किये गये।

वैशाली में शिलान्यास

वैशाली-बासोकुण्ड (पटना) : यहाँ दिनांक 4 नवम्बर, 2004 को अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीरस्वामी की पावन जन्मभूमि पर बननेवाले भव्य जिनालय का शिलान्यास दिल्ली के प्रसिद्ध श्रेष्ठी श्री सुरेन्द्रकुमारजी जौहरी के सुपुत्र श्री अर्जुनजी जैन एवं परिवार द्वारा किया गया।

समारोह की अध्यक्षता डॉ. रघुवंशप्रसाद सिंह-ग्रामीण विकास मंत्री, भारत सरकार ने की। समाजसेवियों में श्री एन. के. सेठी, श्री निर्मलकुमार सेठी, श्री बसन्तभाई दोशी, श्री ताराचन्द जैन, श्री कैलाशचन्द जैन पटना, श्री सतीश जैन दिल्ली, श्री गोपीचन्द सेठी पटना, डॉ. राजेन्द्र बंसल अमलाई, श्री रतनलाल गंगवाल, श्री महावीरप्रसाद सेठी, श्री अखिल बंसल जयपुर, श्री कल्याणमल गंगवाल आदि मंचासीन थे।

इस अवसर पर डॉ. रघुवंशप्रसाद सिंह ने अपने उद्बोधन में कहा कि जन्मभूमि के विकास के लिये बिजली, पानी, रेल, हवाई जहाज जैसी बुनियादी सुविधायें शासन द्वारा उपलब्ध कराकर वैशाली को राष्ट्रीय ही नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय मैप पर लाने का पूरा प्रयास रहेगा।

श्री एन. के. सेठी, जयपुर ने भ. महावीर जन्मभूमि पर बननेवाले विशाल जिनमंदिर के निर्माण की योजना पर प्रकाश ड़ाला।

जैनकाशी के रूप में विख्यात मूडबिद्री के भट्टारक स्वस्ति श्री चारुकीर्तिजी के मंगल सान्निध्य एवं मार्गदर्शन में पण्डित निर्मलकुमारजी बोहरा, जयपुर ने विधि-विधान के कार्य कराये।

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन प्रतिदिन प्रात: 6:45 बजे अवश्य सुनें।
साधना चैनल आपके यहाँ न आता हो तो श्री पंकज जैन (साधना चैनल) से 011-32106419 नम्बर पर सम्पर्क करें।

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

20 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

गाथा–२८

कम्ममलविप्पमुक्को उड्ढं लोगस्स अन्तमधिगंता।
सो सव्वणाणदरिसी लहदि सुहमणिंदियमणंतं ।।२८।।

(हरिगीत)

कर्म मल से मुक्त आतम मुक्ति कन्या को वरे।
सर्वज्ञता समदर्शिता सह अनन्तसुख अनुभव करे।।२८।।

गाथा २७ में संसारी जीव को निश्चय–व्यवहार नयों के द्वारा चेतयिता, उपयोगलक्षित, प्रभु, कर्ता, भोक्ता, देहप्रमाण, अमूर्त और कर्मसंयुक्त कहकर इसकी पहचान कराई थी।

अब इस २८वीं गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव सिद्धपद प्राप्त आत्मा के निरुपाधिस्वरूप की चर्चा करते हुए कहते हैं कि कर्ममल से मुक्त आत्मा लोक के अन्त को प्राप्त करके सर्वज्ञ–सर्वदर्शी होकर अनन्त अतीन्द्रिय सुख का अनुभव करता है।

आचार्य अमृतचन्द्र कहते हैं कि इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने आत्मा का निरुपाधिस्वरूप कहा है, वे कहते हैं कि ह्न आत्मा जिस क्षण कर्मरज से सम्पूर्णरूप से छूटता है, उसी क्षण अपने ऊर्ध्वगमन स्वभाव के कारण लोक के अन्त को पार कर आगे गतिहेतु का अभाव होने से लोकाग्र में ही स्थिर हो जाता है तथा अतीन्द्रियसुख का अनुभव करता है।

उस मुक्त आत्मा को भावप्राण धारणरूप 'जीवत्व' होता है, चिद्रूप लक्षणभूत चेतयित्व होता है, चित्परिणामस्वरूप उपयोगमयत्व होता है। समस्त शक्तिमय होने से प्रभुत्व होता है। निजस्वरूप के रचनेरूप कर्तृत्व होता है। सुख की उपलब्धिरूप भोक्तृत्व होता है, अन्तिम शरीर के अनुसार अवगाह परिणामरूप देहप्रमाणपना होता है तथा उपाधिसंबंध से सर्वथा रहित होने से अर्मूतपना होता है। मुक्त आत्मा को कर्मसंयुक्तपना तो कदापि नहीं होता; क्योंकि वह द्रव्यकर्मों एवं भावकर्मों से विमुक्त हो गया है।

आचार्य जयसेन उपर्युक्त नौ अधिकारों में से सिद्ध जीव की दृष्टि से संयुक्तता को छोड़कर शेष आठ अधिकारों में आगम के अविरोध पूर्वक घटित कर लेना चाहिए ह्न ऐसा कहते है; जबकि आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने आठों को विश्लेषित करके स्पष्ट किया है। सर्वज्ञ और सर्वदर्शित्व की प्रगटता के हेतुओं का प्रतिपादन कर भोक्तृत्व का स्पष्टीकरण अस्ति–नास्ति से किया है।

कवि हीरानन्दजी ने उक्त विषय को अपने काव्य में इसप्रकार कहा है ह्न

(दोहा)

सरव करम–मलरहित निज, उर्द्धलोककै अंत।
सर्वग्यानदरसी सुखी, इंद्रियरहित अनंत।।१६०।।

(सवैया इकतीसा)

भाव–दरव–करममलसौं वियोग भयौ,
ऊरध सुभावगति लोकअंत वासी है।
धरमदरव बिना आगै गतिका अभाव,
ताहीतैं मुगति माहिं चेतना विलासी है।।
सुद्ध ग्यानदरसमैं लोकालोक भासमान,
केवल सुछंद आपरूप अविनासी है।
इंद्रिय–रहित–सुख अनुभौ अनंतकाल,
एकरूप निराबाध सिद्ध मोखवासी है।।१६१।।

उक्त पद्यों का सारांश यह है कि मुक्त जीव सर्व कर्ममल से रहित हैं। उर्ध्वलोक के अन्त में रहते हैं, सर्वज्ञ–सर्वदर्शी, अनन्तसुखी और इन्द्रिय रहित अनन्तकाल तक विराजमान रहते हैं।

उक्त छन्द में कर्ममल के भेद बताते हुए कहा है कि मुक्त जीवों के द्रव्यकर्म व भावकर्म का अभाव हो गया है, उर्ध्वगमन स्वभाववाले हैं और धर्मद्रव्य के अभाव के कारण लोकांत में चेतना में विलास करते हुए विराजते हैं।

शुद्ध ज्ञान–दर्शन में लोकालोक भासित होते हैं, अनन्तकालतक अतीन्द्रियसुख को भोगते हुए निरावाद एकरूप सिद्धलोक के वासी हैं।

गुरुदेवश्री कानजी स्वामी इस गाथा पर प्रवचन करते हुए हमारा ध्यान निम्न बातों की ओर विशेष आकर्षित करते हुए कहते है कि ''वे सिद्ध परमात्मा प्रथम अमर्यादित स्वाभाविक–स्वाधीन सुख को प्राप्त हुए हैं। दूसरे, लोकान्त के आगे यद्यपि धर्मद्रव्य का अभाव है, इसकारण जीव लोकाग्र में रहता है ह्न ऐसा कहा है; परन्तु यह व्यवहारनय का कथन है; वस्तुत: जीव की योग्यता भी लोक में रहने की ही है। तीसरी बात ह्न सिद्ध भगवान को अपने चैतन्य की निर्मल दशारूप उपयोग है। ज्ञान–दर्शन और आनन्द जो आत्मा का त्रिकाल स्वभाव है, वह सिद्धों को अतीन्द्रिय सुख पर्याय के रूप में प्रगट हो गया है।

सिद्ध भगवान को समस्त आत्मिक शक्तियों की सामर्थ्य प्रगट हुई है, इसलिए प्रभुत्वशक्ति पर्याय में भी प्रगट हो गई है। भगवान को जो तीनलोक का नाथ कहा, वह तो तीनलोक के ज्ञाता होने की अपेक्षा से हा है।

जीव अनादिकाल से विभाव पर्याय के कारण आकुलता करके उस आकुलता को भोगता था। चैतन्यस्वभाव के अनन्त आनन्द के अवलम्बन से भगवान को उस आकुलता का अभाव हो गया है और जो सहज–स्वाधीन चैतन्यस्वरूप प्रगट हुआ है, वह अनन्तकाल ऐसा का ऐसा रहेगा। इसप्रकार इस गाथा में विविध आयामों से सिद्ध के स्वरूप का कथन करके सिद्धपद के साधकों को सन्मार्गदर्शन दिया गया है। ●

गाथा–२९

जादो सयं स चेदा सव्वण्हू सव्वलोगदरिसी य।
पप्पोदि सुहमणंतं अव्वाबाधं सगममुत्तं ।।२८।।

(हरिगीत)

आतम स्वयं सर्वज्ञ–समदर्शित्व की प्राप्ति करे।
अर स्वयं अव्याबाध एवं अतीन्द्रिय सुख अनुभवे।।२९।।

इसके पूर्व २८वीं गाथा में कहा था कि कर्ममल से मुक्त निरुपाधिस्वरूप आत्मा सिद्ध है। लोक के अन्त को प्राप्त करके वह आत्मा स्वयं ही अपनी योग्यता से वहाँ ठहरता है; किन्तु वहाँ ठहरने में निमित्तकारणरूप से धर्मद्रव्य का अभाव को कारण कहा गया है। वहाँ जो सहज स्वाधीन चैतन्यस्वरूप सुख प्रगट हुआ है, वह अनन्तकाल तक ऐसा का ऐसा रहेगा।

इब इस २९वीं गाथा में आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि वह चेतयिता सर्वज्ञ और सर्वदर्शी स्वयं होता हुआ स्वकीय अमूर्त अव्याबाध अनंतसुख को उपलब्ध करता है।

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में कहते हैं कि यह सिद्ध के निरुपाधि ज्ञान, दर्शन और सुख का समर्थन है। वास्तव में ज्ञान, दर्शन और सुखस्वभावी आत्मा की संसारदशा में अनादि कर्म-क्लेशों के निमित्त से आत्मशक्ति संकुचित हो गई है, इसकारण वह इन्द्रियों द्वारा क्रमश: कुछ-कुछ जानता है और इन्द्रियाधीन, अव्याबाध सुख का अनुभव करता है; किन्तु जब उसके कर्मक्लेश समस्तरूप से विनष्ट हो जाते हैं, तब पूर्ण आत्मशक्ति प्रगट होने से पूर्ण स्वाश्रित, अव्याबाध और अनन्तसुख का अनुभव करता है। इसलिए स्वयमेव अपने जानने और देखने के स्वभाव वाले तथा स्वकीय सुख का अनुभव करनेवाले सिद्धों को पर से कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

जयसेनाचार्य की टीका में सर्वज्ञ का निषेध करनेवाले चार्वाक मतानुयायी से पूछा गया है कि ''तुम जो यह कहते हो कि ह्न गधे के सींग के समान उपलब्ध न होने के कारण कोई सर्वज्ञ है ही नहीं'' किन्तु तुम्हारा यह मानना ठीक नहीं है; क्योंकि तुम्हारा कथन स्ववचन बाधित है। आचार्य कहते हैं कि हम तुमसे पूछते हैं कि सर्वज्ञ इस देश-काल में नहीं है कि तीनलोक व तीनकाल में कहीं भी नहीं है। यदि इस देश-काल में ही नहीं है ह्न ऐसा कहते हो तो हमें स्वीकृत ही है और यदि तीनलोक व तीनकाल में कहीं भी नहीं है'' ऐसा कहोगे तब तो तुम्हीं सर्वज्ञ हो गये अन्यथा तुम तीनलोक को बिना देखे-जाने सर्वज्ञ का निषेध कैसे कर सकते हो ? यदि सर्वज्ञ से रहित तीनलोक व तीनकाल ज्ञात नहीं हुए तो बिना जाने निषेध संभव ही नहीं है।

कविवर हीरानन्दजी इसी आशय को १७५ वें काव्य में निम्नप्रकार स्पष्ट किया हैं ह्न

(सवैया इकतीसा)

ग्यानदृष्टि-सुख-सत्ता साहजीक भाव लसै,
संसारमैं बसै जौलौं तौलौं कर्म छाया है।
इंद्रियसहाय क्रम कछू-कछू जानै देखै,
मूरत व्याबाध सांत सुखाभास भाया है।।
कर्म सारै नासैंतै आप असहाय भासै,
जुगपत जानै विश्व देखत सवाया है।
मूरत व्याबाध बिना सुखकौ अनंत लसै,
सिद्धगतिविषै सिद्ध आतमा सुहाया है।।

(दोहा)

नास्तिवाद जामैं लसै, सो चार्वाक अजान।
ताका संबोधन भला, इह सरवग्य प्रमान।।१७६।।
प्रान चारि तिहुँकालमैं, जीवत सो पुन जीव।
बलइंद्रिय-उस्सास फुनि आयु जू प्रान सदीव।।१७७।।

उक्त हिन्दी पद्यों का भावार्थ यह है कि सिद्ध आत्मा सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अनंत सुखी, विनमूर्ति और अव्याबाध गुणोंमय होते हैं। इसतरह सिद्धदशा में ज्ञान, दर्शन, सुख-सत्ता आदि सब सहजभाव से व्यक्त हैं तथा संसारदशा में कर्म के निमित्तपने एवं अपनी तत्समय की योग्यता से इन्द्रियादि के निमित्त से कुछ-कुछ अपूर्ण जानते-देखते हैं। ऐसी स्थिति में मूर्तिक, बाधा सहित, अल्पज्ञान-दर्शनवाले होते हैं।

नास्तिक मतवाद का निराकरण करते हुए १७६वें छन्द में सर्वज्ञसिद्धि का संकेत किया है।

इस गाथा पर प्रवचन करते हुए गुरुदेवश्री कानजी स्वामी कहते हैं ह्न वे शुद्ध चिदात्मा स्वयं अपने स्वाभाविक भाव से ही सर्व को जानने-देखनेवाले हैं, किसी अन्य के कारण या व्यवहार के कारण सर्वज्ञ-सर्वदर्शीपना नहीं होता। आत्मा ही सर्वज्ञस्वभावी है। अल्पज्ञता अथवा राग-द्वेष आत्मा की वस्तु नहीं है, संयोग तो भिन्न हैं ही ह्न ऐसा ज्ञान करके स्वभाव में स्थिरता करने से ही सर्वज्ञता प्रगट होती है।

ज्ञान, दर्शन और आनन्द आत्मा का त्रिकाल स्वभाव है, वह सिद्धों को पूर्ण प्रगट हो गया है। ज्ञान, दर्शन और आनन्द ह्न तीनों अपने स्वकीय स्वभाव से ही प्रगट हुए हैं।

यहाँ ये प्रश्न है कि जब सब जीवों का परिपूर्ण परमात्मस्वभाव है तो सबको वैसी परिपूर्ण दशा क्यों नहीं होती ? तथा जो सिद्ध परमात्मा हुए हैं, वे किसप्रकार हुए हैं ? और जो सिद्ध नहीं होते, वे किसकारण नहीं होते ?

इनके समाधान में कहा है कि अनादि से मिथ्यात्वादि-संक्लेश भावों के कारण ही अपनी सर्वज्ञशक्ति आच्छादित हो रही है। 'मैं पूर्ण ज्ञानस्वरूप हूँ' ह्न ऐसा न मानकर अज्ञानी स्वयं को अल्पज्ञ, रागी और पामर मानता रहा है, यह मान्यता ही सर्वज्ञता का घात करनेवाली है, सर्वज्ञ दशा होने में बड़ी बाधा है। जब अपने सर्वज्ञस्वभाव की श्रद्धा होगी तभी वह सर्वज्ञदशा पर्याय में प्रगट हो जायेगी। विशेष बात यह है कि यह अल्पज्ञता और दु:ख किसी कर्म, काल आदि पर के कारण नहीं है, परद्रव्य तो निमित्तमात्र हैं, मुख्य कारण तो अपनी मिथ्या मान्यता ही है।

पर्याय में ज्ञान का अल्पविकास (थोड़ा क्षयोपशमज्ञान) होने पर भी उस ज्ञानपर्याय को अन्तर्मुख करके ''मैं सर्वविकासी शक्तिवान हूँ'' ऐसा प्रतीति में लें तब तो पर्याय का विकास होकर सर्वज्ञता प्रगट हो जाती है; किन्तु यदि प्रगट ज्ञान पर्याय को चैतन्य शक्ति में न जोड़कर पर में जोड़ता है तो ज्ञान का विकास रुक जाता है और वह पराधीन हो जाता है।

प्रश्न ह्न 'पर लोक है, पुण्य-पाप होते हैं' ह्न इसका प्रमाण क्या है ?

समाधान ह्न समाधान यह है कि जीव जन्म से ही भले-बुरे संयोगों में आते हैं, बुद्धिमान और मूर्ख होते हैं, खूबसूरत या बदसूरत हैं, रोगी या निरोगी होते हैं, राजा या रंक होते हैं ह्न इससे सिद्ध होता है कि जिसने पूर्व जन्म में जैसे पुण्य-पाप किए तदनुसार उन्हें इस जन्म में फल मिलता है। इतने बड़े अन्तर का दूसरा कोई कारण हो ही नहीं सकता। जीव को अपने भले-बुरे कर्मों के फल में ही अनुकूल-प्रतिकूल संयोग मिलते हैं। अत: परलोक और पुण्य-पाप का निषेध संभव ही नहीं है।

शरीर तो जड़ है, अजीव और भगवान आत्मा चैतन्यमूर्ति है। आत्मा में ही सर्वज्ञ-सर्वदर्शी और पूर्ण आनन्दमय होने की ताकत है। पर्याय में अल्पज्ञता होने पर भी मैं स्वयं अपने स्वभाव से पूर्ण ज्ञान-दर्शन और आनन्दमय हो सकता हूँ। सर्वप्रथम ऐसी प्रतीति करना चाहिए।

पहले साधकदशा में अपूर्ण आनन्द था, तब अज्ञानी ने पर में सुख व आनन्द माना था, पर इसके द्वारा अन्तर्दृष्ट से आत्मा का अनुभव करते ही स्वभाव में आनन्द प्रगट हुआ और पूर्ण आनन्द की प्रतीति हो गई। अत: हमें श्रद्धा में पर का कर्तृत्व छोड़कर, त्रिकाल चैतन्यस्वभाव का स्वामी होकर स्वसन्मुखता की उग्रता द्वारा सर्वज्ञता प्रगट करने का पुरुषार्थ करना चाहिए। यही गुरुदेव द्वारा इस गाथा पर दिये गये प्रवचन का सार है। ●

इन्द्रध्वज मण्डल विधान एवं शिविर सम्पन्न

ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल के तत्त्वावधान में श्री सीमंधर जिनालय, फालका बाजार में दिनांक 20 अक्टूबर से 27 अक्टूबर, 2004 तक श्री इन्द्रध्वज महामण्डल विधान एवं आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

प्रतिदिन प्रात: नित्य नियम पूजन एवं विधान, दोपहर में बालकक्षा तथा रात्रि में जिनेन्द्रभक्ति, प्रवचन एवं ज्ञानवर्द्धक सांस्कृतिक कार्यक्रमों में पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, पण्डित अनिलजी 'धवल' भोपाल एवं पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर का लाभ मिला।

विधि-विधान के कार्य पण्डित संजयकुमारजी शास्त्री, जेवर ने कराये। अन्तिम दिन जिनेन्द्र शोभायात्रा निकाली गई **ह्न शीतलप्रसाद जैन**

समन्तभद्र शिक्षण संस्थान के छात्रों द्वारा भ्रमण

सिद्धायतन (द्रोणगिरि) : यहाँ सिद्धायतन स्थित श्री समन्तभद्र शिक्षण संस्थान के छात्रों द्वारा दिनांक 8 नवम्बर, 2004 को भगवा, घौरा, टीकमगढ़, बानपुर, महरौनी, मड़ावरा, ललितपुर, सागर, बण्डा, कर्रापुर, शाहगढ़, अमरमऊ, बक्स्वाहा आदि स्थानों की यात्रा कर प्रत्येक नगर के दिगम्बर जैन मन्दिर में पूजन, भक्ति, विचारगोष्ठी, प्रवचन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

सम्पूर्ण कार्यक्रम का संचालन पण्डित कोमलचन्दजी जैन, टड़ा के निर्देशन में सम्पन्न हुआ; जिसमें ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री चन्द्रभानजी जैन एवं मन्त्री श्री प्रेमचन्दजी जैन का भी सानिध्य प्राप्त हुआ।

ज्ञातव्य है कि सिद्धायतन-द्रोणगिरि में ही **दिनांक 25 दिसम्बर से 31 दिसम्बर, 2004 तक** आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया जायेगा; जिसमें पण्डित उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, डॉ. मन्नुलालजी जैन सागर, पण्डित कैलाशचन्दजी 'अचल' ललितपुर, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा आदि विद्वानों का सानिध्य प्राप्त होगा। **ह्न प्रेमचन्द जैन, मन्त्री**

वेदी शुद्धि सानन्द सम्पन्न

किशनगढ़-अजमेर (राज.) : यहाँ श्री नेमिनाथ दि. जैन चैत्यालय, हमीर कॉलोनी में दिनांक 10 नवम्बर, 2004 को वेदी शुद्धिपूर्वक भगवान नेमिनाथस्वामी की प्रतिमा विराजमान की गई।

इस अवसर पर दिनांक 9 नवम्बर को रात्रि में पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री, जयपुर का मार्मिक प्रवचन हुआ। दूसरे दिन प्रात: शान्तिविधान का आयोजन किया गया; जिसके विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के सान्निध्य में विधानाचार्य पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित सुरेशजी काले, राजुरा द्वारा कराये गये।

दानराशि

1.स्व. श्री लक्ष्मीनारायणजी पंसारी की स्मृति में श्री मोतीलालजी पंसारी द्वारा वीतराग-विज्ञान को 500/- रुपये प्राप्त हुये; एतदर्थ धन्यवाद !

ह्न प्रबन्ध सम्पादक

कविता ह्न

नए वर्ष पर कीजिए, नई कामना मित्र।
सर्व सुखी जग जीव हों, मंगल हो सर्वत्र।।१।।
राज ह्न नीति में धर्म हो, धर्म नीति से दूर।
सभी सुखी हो राज में, कोइ न हो मजबूर।।२।।
करे नित्य घर बार सब, श्रम के सही प्रयोग।
सम्यक् श्रम से सदा ही, जगता है उपयोग।।३।।
सेवा और सत्कार हो, होवे अतिथि निहाल।
आत्मतोष की सम्पदा, मिलती हैं तत्काल।।४।।
नित विराधना से बचें, खुले शरण के द्वार।
दान अतिथि सम्मान हो, घर-घर बारम्बार।।५।।
व्यसन कामना से रहे, हर कोई अति दूर।
चलन चरण में मुखर हो, सदाचार भरपूर।।६।।
शाकाहारी सभी हो, शाकाहारी देश।
शाकाहारी बोल हों, शाकाहारी वेश।।७।।
गुणी जनों की वन्दना, मिलकर करें सहर्ष।
घर-घर चर्चा धर्म की, पालें जिन-आदर्श।।८।।

ह्नडॉ. महेन्द्रसागर प्रचण्डिया

बाल संस्कार शिक्षण शिविर सानन्द सम्पन्न

सोलापुर (महा.) : यहाँ श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर में युवा स्वाध्याय मण्डल, सोलापुर के तत्त्वावधान में दिनांक 15 नवम्बर से 22 नवम्बर, 2004 तक बाल शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर स्थानीय विद्वान पण्डित विक्रान्तजी शाह एवं पण्डित प्रशान्तकुमारजी मोहरे के निर्देशन में सोलापुर के विभिन्न स्थानीय जिनमन्दिरों में पण्डित विशालकुमारजी कान्हेड हिंगोली एवं पण्डित सुनीलकुमारजी बेलोकर सुलतानपुर द्वारा बालकों एवं प्रौढों को जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्तों का रसपान कराया गया। **ह्न प्रशान्त मोहरे**

'चलो पाठशाला चलो हम' का विमोचन

आचार्य कुन्दकुन्द सर्वोदय फाउण्डेशन (रजि.) जबलपुर द्वारा प्रस्तुत बाल कविताओं की कैसिट धरम करेंगे हम हम हम की लोकप्रियता के बाद इसके द्वितीय पुष्प चलो पाठशाला चले हम (कैसिट व सी.डी.) का विमोचन विदिशा (म.प्र.) में सिद्धचक्र मण्डल विधान के अवसर पर हुआ।

इस कैसिट में बालस्तर के विभिन्न गीतों को समाहित किया गया है; जिसकी रचना बाल ब्र. सुमतप्रकाशजी, खनियाधांना एवं पण्डित विरागजी शास्त्री, जबलपुर द्वारा की गई है तथा प्रायोजक आत्मार्थी ट्रस्ट दिल्ली है।

नि:शुल्क प्राप्त करें !

वीर निर्वाण संवत् 2030 सन् 2005 का जैन तिथी दर्पण रंगीन छपकर तैयार है। जो भी महानुभाव मँगाना चाहते हो वे हिन्दी में मय पिन कोड पता लिखकर निम्न पते से मँगा सकते है ह्न

श्री चम्पालाल जैन (सम्पादक, व्यापार समाचार पत्र)
साधोगंज, ग्वालियर - 474001 (म.प्र.)

श्री ज्ञायक चैरिटेबल ट्रस्ट, बांसवाड़ा द्वारा निर्माणाधीन

रत्नत्रयतीर्थ ध्रुवधाम का भव्य शिलान्यास समारोह एवं श्री रत्नत्रय मण्डल विधान

(मंगलवार, 7 दिसम्बर एवं बुधवार, 8 दिसम्बर, 2004)

कार्यक्रम स्थल : रत्नत्रयतीर्थ 'ध्रुवधाम', बांसवाड़ा-डूंगरपुर मार्ग, कूपड़ा, बांसवाड़ा (राज.)

सद्धर्मप्रेमी बन्धुवर, सादर जयजिनेन्द्र !

अत्यन्त हर्ष के साथ सूचित कर रहे हैं कि अन्तिम तीर्थनायक भगवान महावीरस्वामी द्वारा प्रतिपादित परमपूज्य कुन्दकुन्द आदि आचार्यों, विद्वानों द्वारा लिखित एवं आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी द्वारा प्रचारित शुद्धात्मतत्त्वपोषक, भवतापनाशक जिनवाणी के प्रचार प्रसार, पठन-पाठन हेतु व देव-शास्त्र-गुरु की आराधनापूर्वक आत्मज्ञान व संयम की साधना हेतु प्राकृतिक वातावरण में श्री ज्ञायक चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा रत्नत्रय तीर्थ '**ध्रुवधाम**' की स्थापना की जा रही है।

'ध्रुवधाम' में निर्मित होनेवाले विभिन्न परिसरों का शिलान्यास समारोह रत्नत्रय मण्डल विधानपूर्वक दिनांक 7 एवं 8 दिसम्बर को आयोजित किया जा रहा है।

विधि-विधान : महोत्सव में सम्पूर्ण विधि-विधान के कार्य प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित राकेशजी शास्त्री दाहोद, पण्डित सुनीलजी 'धवल', पण्डित दीपकजी 'धवल' भोपाल, पण्डित वीरेन्द्रजी शास्त्री डडूका एवं पण्डित आशीषकुमारजी शास्त्री टीकमगढ़ आदि विद्वानों द्वारा शुद्धाम्नायानुसार सम्पन्न होंगे।

विद्वत् समागम : इस अवसर पर ज्ञानगंगा का रसपान कराने हेतु ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया, पण्डित शैलेषभाई शाह तलोद, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, डॉ. मानमलजी जैन कोटा, पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा, पण्डित अनिलकुमारजी पाटोदी बड़नगर, पण्डित ऋषभकुमारजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, डॉ. बी.एल. सेठी जयपुर, पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री कोटा, पण्डित संजयजी शास्त्री लोहारिया, पण्डित चैतन्यजी शास्त्री कोटा आदि तथा अन्य अनेक स्थानीय विद्वानों के प्रवचनों व सत्समागम का लाभ प्राप्त होगा।

आपसे अनुरोध है कि इस प्रसंग पर सपरिवार पधारकर कार्यक्रम को सफल बनावें। आपकी उपस्थिति ही हमारी सफलता है।

मांगलिक कार्यक्रम

7 दिसम्बर, 2004

प्रात: मंगल कलश शोभायात्रा, ध्वजारोहण, मंच उद्घाटन, कलश स्थापना, विधान एवं प्रवचन।

दोपहर : शास्त्र प्रवचन।

रात्रि : जिनेन्द्र भक्ति, प्रवचन एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम

8 दिसम्बर, 2004

प्रात: जिनेन्द्र पूजन, रत्नत्रय विधान, शास्त्र प्रवचन, शिलान्याससभा, शिलान्यास विधि।

दोपहर : शास्त्र प्रवचन।

रात्रि : जिनेन्द्र भक्ति, शास्त्र प्रवचन।

शिलान्यास समारोह

8 दिसम्बर, 2004 प्रात: 9.45 से

मुख्य अतिथि : माननीय श्री गुलाबचन्दजी कटारिया (गृहमंत्री, राजस्थान सरकार)

अध्यक्ष : माननीय श्री भवानी जोशी (स्वास्थ्यमंत्री, राजस्थान सरकार)

विशिष्ट अतिथि : ब्र. बसन्तभाई दोशी, मुम्बई (महामंत्री, दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट)
श्री ताराचन्दजी जैन, उदयपुर (जिलाध्यक्ष ह्न भा.ज.पा.)
श्री जयन्तीभाई दोशी, मुम्बई

सम्पर्क सूत्र : बांसवाड़ा में ह्न महीपाल जैन -9426004640, धनपाल 'ज्ञायक'-9414101452, राजकुमार शास्त्री -02962-248975 ● उदयपुर में ह्न कन्हैयालाल दलावत - 0294-2427551 ● दाहोद में ह्न मुकेश शाह -9426004650

निवेदक : श्री ज्ञायक चैरिटेबल ट्रस्ट, 1/15, खान्दू कॉलोनी, बांसवाड़ा (राज.)

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 18

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ...)

इस गाथा के माध्यम से आचार्य इसे स्पष्ट करते हैं ह्न

कुलिसाउहचक्कधरा, सुहोवओगप्पगेहिं भोगेहिं।
देहादीणं विद्धिं, करेंति सुहिदा इवाभिरदा।।७३।।

(हरिगीत)

वज्रधर अर चक्रधर सब पुण्यफल को भोगते।
देहादि की वृद्धि करें पर सुखी हों ऐसे लगे।।७३।।

वज्रधर और चक्रधर शुभोपयोगमूलक (पुण्यों के फलरूप) भोगों के द्वारा देहादिकी पुष्टि करते हैं और इसप्रकार भोगों में रत वर्तते हुए सुखी जैसे भासित होते हैं। (इसलिये पुण्य विद्यमान हैं)

इस ७३वीं गाथा की टीका बहुत मार्मिक है ह्न

'शक्रेन्द्र और चक्रवर्ती अपनी इच्छानुसार प्राप्त भोगों के द्वारा शरीरादि को पुष्ट करते हुए ह्न जैसे गोंच (जोंक) दूषित रक्त में अत्यन्त आसक्त वर्तती हुई सुखी जैसी भासित होती है; उसीप्रकार उन भोगों में अत्यन्त आसक्त वर्तते हुए ये शक्रेन्द्र और चक्रवर्ती सुखी जैसे भासित होते हैं; इसलिये शुभोपयोगजन्य फलवाले पुण्य दिखाई देते हैं (अर्थात् शुभोपयोगजन्य फलवाले पुण्यों का अस्तित्व दिखाई देता है।)'

मूल गाथा को पढ़ने से हमें ऐसा लगता है कि चक्रवर्ती तथा इन्द्रों को पुण्य के उदय से बहुत सुख प्राप्त होता है ह्न ऐसा आचार्य कह रहे हैं।

परन्तु आचार्य तो यह कह रहे हैं कि जिसप्रकार जोंक गंदे खून को पीकर खुश होती है और सुख अनुभव करती है; उसीप्रकार ये इन्द्र और चक्रवर्ती पाँच इन्द्रियों के विषयों का सेवन करते हुए अपने को सुखी अनुभव करते हैं, सुखी मानते हैं एवं इसमें वे अनुकूलता का वेदन करते हैं। गोंच और गंदे खून का उदाहरण देकर अमृतचन्द्राचार्य ने लौकिक सुख-सुविधाओं का हेयत्व सिद्ध किया है।

अगली गाथा में भी इसे ही विस्तार दिया गया है तथा टीका में अमृतचन्द्राचार्य ने फिर गोंच का उदाहरण देकर उस विषय को स्पष्ट किया है।

ते पुण उदिण्णतण्हा दुहिदा तण्हाहिं विसयसोक्खाणि।
इच्छंति अणुभवंति य आमरणं दुक्खसंतत्ता।।७५।।

(हरिगीत)

अरे जिनकी उदित तृष्णा दुःख से संतप्त वे।
हैं दुखी फिर भी आमरण वे विषयसुख ही चाहते।।७५।।

जिनकी तृष्णा उदित है ऐसे वे जीव तृष्णाओं के द्वारा दुःखी होते हुए मरणपर्यंत विषयसुखों को चाहते हैं और दुःखों से संतप्त होते हुए उन्हें भोगते हैं।

इसे ही टीका में उदाहरण के माध्यम से विस्तार से स्पष्ट किया है ह्न

''जिनके तृष्णा उदित है - ऐसे देवपर्यंत समस्त संसारी, तृष्णा दुःख का बीज होने से पुण्यजनित तृष्णाओं के द्वारा भी अत्यन्त दुःखी होते हुये मृगतृष्णा में से जल की भाँति विषयों में से सुख चाहते हैं और उस दुःख संताप के वेग को सहन न कर सकने से विषयों को तबतक भोगते रहते हैं, जबतक कि विनाश को प्राप्त नहीं हो जाते।''

तात्पर्य यह है कि अंतिम समय तक उसको भोगने की कोशिश करते रहते हैं।

जिसप्रकार जोंक गंदे खून को पीने के लिए चिपट जाती है, यदि उसे छुड़ाने की कोशिश करो तो भी वह मरने तक छूटती नहीं है। संसी (संडासी) से पकड़कर उसे खींचना चाहो तो भी हम उसे जिन्दा नहीं निकाल सकते। जब वह पूरा खून पी लेगी और उसका पेट भर जाएगा; तभी वह उसे छोड़ेगी, हम उसे बीच में से नहीं हटा सकते। मरणपर्यन्त से आशय मरते दमतक नहीं है; अपितु मौत की कीमत पर ह्न ऐसा है। स्वयं का मरण न भी हो तो भोग के भाव का तो मरण होता ही है।

जैसे खाना खा रहे हो और पेट भर जाये, फिर भी लड्डू खाना नहीं छोड़ते। मरणपर्यन्त से तात्पर्य यह है कि जीवन के अंतिम समय तक पंचेन्द्रिय के विषयों को भोगना चाहते हैं; लेकिन रोजाना मरणपर्यन्त अर्थात् जबतक वह भाव जीवित है, पेट नहीं भर गया है, अब और अंदर जाता नहीं; तबतक यह खाता रहता है।

एक ऐसे व्यक्ति को मैंने देखा है जो बाजार में चाट वगैरह खाता था। जब उसका पेट भर जाता तो वह मुँह में ऊँगलियाँ डालकर वोमेटिंग (उल्टी) करता था और फिर चाट, कचौड़ी, पकौड़ी खा लेता था।

पचास बीमारियाँ है, डायबिटीज है; फिर भी इसे मिश्री-मावा चाहिए। यह कहता है कि ह्न 'देख लूँगा, ज्यादा होगा तो दो इन्जेक्शन और लगवा लूँगा।' इसप्रकार प्राणी मरणपर्यन्त मृत्यु की कीमत पर भी इन विषयों को भोगते हैं। वास्तव में यह दुःख ही है, सुख नहीं है।

अब आचार्य जिसे यह जगत सुख मानता है, वह सुख कैसा है ? इसकी चर्चा करते हैं ह्न

सपरं बाधासहिदं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं।
जं इंदिएहिं लद्धं तं सोक्खं दुःखमेव तहा।।७६।।

(हरिगीत)

इन्द्रियसुख सुख नहीं दुख है विषम बाधा सहित है।
है बंध का कारण दुखद परतंत्र है विच्छिन्न है।।७६।।

जो इन्द्रियों से प्राप्त होता है, वह सुख परसंबंधयुक्त, बाधा सहित, विच्छिन्न, बंध का कारण और विषम है; इसप्रकार वह दुःख ही है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि इस अधिकार में यह सिद्ध किया गया है कि पुण्य के उदय में प्राप्त होनेवाला विषयसुख सुख नहीं, वस्तुतः दुख ही है। सच्चा सुख तो अतीन्द्रिय-आनंद ही है। ●

सातवाँ प्रवचन

प्रवचनसार ग्रन्थाधिराज के ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार के शुभपरिणामाधिकार पर चर्चा चल रही है।

जब पुण्य के उदयवाले चक्रवर्ती और इन्द्रादि भी दुखी हैं तो फिर पुण्य और पाप में क्या अन्तर रह जाता है ? जो व्यक्ति पुण्य को पाप के समान ही हेय नहीं मानता; वह एकप्रकार से पुण्य के फल में ही आसक्त है।

इसके बाद ७९वीं गाथा की उत्थानिका में कहते हैं कि सर्वसावद्ययोग को छोड़कर चारित्र अंगीकार किया होने पर भी यदि मैं शुभोपयोग परिणति के वश होकर मोहादि का उन्मूलन न करूँ तो मुझे शुद्ध आत्मा की प्राप्त कहाँ से होगी ? इसप्रकार विचार करके मोहादि के उन्मूलन के प्रति सर्वारम्भ (सर्वउद्यम) पूर्वक कटिबद्ध होता है।

वस्तुत: बात यह है कि यह जीव तो जीवनभर शुभोपयोग के मोह में फँसा रहे और उसी में लगा रहे तो आत्मा को कैसे प्राप्त कर सकता है?

गाथा मूलत: इसप्रकार है ह्न

चत्ता पावारंभं समुट्ठिदो वा सुहम्मि चरियम्मि।
ण जहदि जदि मोहादी ण लहदि सो अप्पगं सुद्धं।।७९।।

(हरिगीत)

सब छोड़ पापारंभ शुभचारित्र में उद्यत रहें।
पर नहीं छोड़े मोह तो शुद्धातमा को ना लहें।।७९।।

पापारम्भ को छोड़कर शुभ चारित्र में उद्यत होने पर भी यदि जीव मोहादि को नहीं छोड़ता तो वह शुद्ध आत्मा को प्राप्त नहीं होता।

अमृतचन्द्राचार्य इस गाथा की टीका में बाह्यक्रियारूप चारित्र एवं शुभभाव की चर्चा अभिसारिका का उदाहरण देते हुए इसप्रकार करते हैंह्न

''जो जीव या जो मुनिराज समस्त सावद्ययोग के प्रत्याख्यानस्वरूप परमसामायिक नामक चारित्र की प्रतिज्ञा करके भी धूर्त अभिसारिका (नायिका ह्न संकेत के अनुसार अपने प्रेमी से मिलने जानेवाली स्त्री) की भाँति शुभोपयोगपरिणति से अभिसार (मिलन) को प्राप्त होता हुआ अर्थात् शुभोपयोग परिणति के प्रेम में फंसता हुआ मोह की सेना के वशवर्तनपने को दूर नहीं कर डालता, जिसके महादुख संकट निकट है ह्न ऐसा वह शुद्ध आत्मा को कैसे प्राप्त कर सकता है ? इसलिए मैंने मोह की सेना पर विजय प्राप्त करने के लिए कमर कसी है।''

यह बहुत मार्मिक टीका है। जब कोई व्यक्ति मुनिदीक्षा लेता है तो उसके समस्त सावद्य का त्याग होता है। उस समय उसके परिणामों को देखें तो पायेंगे कि उसके परिणाम आत्मा के कल्याण करने के ही थे, समाज के उद्धार करने के नहीं, हर गाँव के मन्दिर की वेदी ठीक हो, वेदी का मुख वास्तुशास्त्र के अनुसार हो ह्न ऐसे नहीं थे। हर गाँव के पास टेकड़ी (पहाड़ी) पर तीर्थ बना दूँ। क्या मुनिव्रत लेते समय उनके मन में ऐसे संकल्प रहे होंगे ?

कुन्दकुन्दाचार्य ने तो स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि 'जब तेरे परिणाम शिथिल होने लगे तो उस दिन का विचार करना कि जिस दिन तुमने दीक्षा ली थी।

आचार्यदेव ने महत्त्वपूर्ण बात यह कही कि तूने दीक्षा लेते समय यह प्रतिज्ञा की थी कि '**मैं परमसामायिकरूप शुद्धोपयोग चारित्र को अंगीकार करता हूँ।**'

यहाँ इस विषय को समझाने के लिए आचार्यदेव ने धूर्त अभिसारिका का उदाहरण दिया है।

अभिसारिका वह प्रेमिका है जो रात्रि में ऐसे वस्त्र पहनती है कि दूर से कुछ पता ही नहीं चले। यदि अमावस की रात्रि है तो वह काले कपड़े पहनकर आती है और पूर्णिमा की रात है तो वह सफेद साड़ी पहनकर आती है। पुराने जमाने में राजाओं के यहाँ बहुत पहरे लगे रहते थे। तब जो प्रेमिका उन पहरेदारों को धोखा देकर, घूस देकर जैसे-तैसे प्रेमी के पास पहुँच जाये; वह धूर्त अभिसारिका है।

आचार्यदेव यहाँ अभिसारिका का उदाहरण देकर यह समझा रहे हैं कि शुद्धोपयोग की प्रतिज्ञा लेकर शुभोपयोग में लग जाए तो समझना कि वे शुद्धोपयोगरूप सर्वांग सुन्दर रानी को छोड़कर शुभभावरूपी धूर्त अभिसारिका के चक्कर में पड़ गए हैं। इतने कठोर शब्दों का प्रयोग किया है आचार्यदेव ने।

देखो, आचार्यदेव ने शुभभाव की क्रिया को धूर्त अभिसारिका बताया है। अभिसारिका शब्द स्वयं अपवित्र है, उसके साथ धूर्त शब्द और लगा दिया है। यहाँ तो 'धतूरा और नीम चढ़ा' की कहावत चरितार्थ हो गई।

यहाँ कहा है कि जो शुभोपयोगरूप परिणति से अभिसार (मिलन) को प्राप्त हुआ है, वह महासंकट में है। निगोद के अतिरिक्त और कोई महासंकट नहीं है। तात्पर्य यह है कि वह अल्पकाल में ही निगोद वापिस चला जायेगा।

जातिस्मरण के आधार से अभी जो यह बता रहा है कि वह पूर्व में मनुष्य था या देव था; उससे हम पूछते हैं कि भूतकाल में तो अनादिकाल से हम सभी निगोद में ही थे, वहाँ से निकलकर इस गति में आए हैं ह्न यह तो महासत्य है न ! मध्य में कोई एक पर्याय श्रेष्ठ आ गई तो भूतकाल तो बहुत लंबा है। सबसे अधिक भूतकाल तो अंधकारमय ही रहा है। इसी भूतकाल में किसी एक पर्याय में चमत्कार हो गया था तो उसी पर्याय में एकत्वबुद्धि करके महिमावंत होकर भविष्य को बिगाड़ रहा है।

आचार्यदेव तो यहाँ यह कह रहे हैं कि जो शुभोपयोग में लग रहे हैं ह्न ऐसे मुनिराज भी महादु:खसंकट के निकट हैं। मान-प्रतिष्ठा का भाव न रखते हुए यदि गृहस्थ मन्दिर बनवा रहा है तो वह शुभभाव है। पर जिसने पाप का आरंभ त्याग दिया; उसके लिए तो यह पुण्य भी नहीं है; क्योंकि मकान बनाना, सड़के बनाना ह्न यह सब पापारम्भ है। यह गृहस्थ का कार्य है। साधु तो मात्र दूर से दर्शन कर सकता है।

साधु यदि इन सबकी प्रेरणा देते हैं तो वह कृत-कारित-अनुमोदना समान होने के कारण पाप ही की श्रेणी में आता है।

यहाँ तो उन मुनिराजों के सन्दर्भ में कहा गया है कि जिनका व्यवहारचारित्र पूर्णत: सम्यक् है एवं जो निर्दोष शुभचर्या में लगे हुए हैं; किन्तु मोह को नहीं छोड़ते हैं तो वे धूर्त अभिसारिका के चक्कर में फँस गए हैं। ऐसे लोग शुद्धात्मा को कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?

देखो ! यहाँ आचार्य ने स्पष्ट लिखा है कि ऐसी भूमिका में रहनेवालों को तो सम्यग्दर्शन सम्भव भी नहीं है। तो चारित्र की क्या बात करें ?

अब आचार्य स्वयं के सन्दर्भ में कहते हैं कि ह्न ''**अतो मया मोहवाहिनीविजयाय बद्धा कक्षेयम्।** ह्न इसलिए मैंने मोह की सेना पर विजय प्राप्त करने को कमर कसी है।''

यहाँ आचार्य दर्शनमोह और चारित्रमोह ह्न दोनों की चर्चा कर रहे हैं। आचार्यदेव ने यहाँ 'मैंने कमर कसी है।' यह शब्दप्रयोग किया है; अत: यह निश्चितरूप से चारित्रमोह की ही बात है; अत: इस उत्थानिका को ८० व ८१ दोनों गाथाओं की उत्थानिका समझना चाहिए। ●

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

पण्डित दिनेशभाई शाह एवं डॉ. उज्ज्वला शाह द्वारा अमेरिका में धर्मप्रभावना

पण्डित दिनेशभाई शाह एवं डॉ. उज्ज्वला शाह, मुम्बई द्वारा दि. 18 सितम्बर से 29 नवम्बर, 2004 लगभग ढाई माह तक अमेरिका के डलास, डीट्रोइट, शिकागो, वाशिंग्टन, मियामी, सान फ्रांसिस्को आदि विभिन्न स्थानों पर जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, करणानुयोग परिचय, कार्य-कारण रहस्य जैसे गंभीर विषयों का अत्यन्त सरलता से अध्यात्मरसगर्भित मार्मिक विवेचन किया गया; जिसके द्वारा अपूर्व धर्मप्रभावना हुई। **ह्न अतुल खारा, डलास**

मौलिक - लेखन प्रतियोगिता

स्व. श्री ओंकारप्रसाद जैन धर्मप्रभावक ट्रस्ट, मौ द्वारा **तीर्थसुरक्षा कब, क्यों और कैसे ?** विषय पर मौलिक-लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। लेख भेजने की अन्तिम तिथि **दिनांक 30 जनवरी, 2005** तक है।

प्रतियोगिता में **प्रथम पुरस्कार 301/- रुपये, द्वितीय पुरस्कार 201/- रुपये एवं तृतीय पुरस्कार 101/- रुपये** है ; जिसके नियम निम्नानुसार है ह्न

1) प्रतियोगी अपनी प्रति स्पष्ट लेखन या टंकण मुद्रित भेजें।
2) लेखन मौलिक होना चाहिये।
3) लेख अपने विचार व वर्तमान परिस्थिती को ध्यान में रखकर लिखें।
4) उम्र या शब्द की कोई सीमा नहीं हैं।
5) निर्णायकों का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा।
6) अपनी प्रति निम्नांकित पते पर ही भेजे।

ह्न संयोजक, शुद्धात्मप्रकाश शास्त्री, परिणति प्रोव्हिजन स्टोर्स, मु.पो. मौ, जि. भिण्ड 477222 (म.प्र.)

पाठशाला निरीक्षण सानन्द सम्पन्न

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के स्नातक विद्वान पण्डित अनिलकुमारजी बेलोकर सुलतानपुर द्वारा दिनांक 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर, 2004 तक महाराष्ट्र प्रान्त के सेनगाँव, हराल, रिसोड, मुंगला, शिरपुर, मालेगाँव, डासाला एवं वाशिम आदि विभिन्न स्थानों पर श्री वीतराग-विज्ञान पाठशाला बोर्ड, जयपुर द्वारा संचालित वीतराग-विज्ञान पाठशालाओं का निरीक्षण कर अध्यापक, छात्रों तथा स्थानीय समाज को पाठशाला संचालन हेतु उचित निर्देश दिये गये।

इस दौरान कई स्थानों पर निष्क्रिय पाठशालाओं को पुन: सक्रिय किया गया। प्रत्येक स्थान पर आपके प्रवचन, प्रौढकक्षा, बालकक्षा, जिनेन्द्रभक्ति एवं विधानादि के आयोजनों द्वारा समाज में विशेष धर्माप्रभावना हुई। ज्ञातव्य है कि आपके द्वारा पानकनेरगाँव, वरूड (बु), अन्थूर्णे, अक्कलकोट, लासूर्णे आदि स्थानों पर नवीन पाठशालायें प्रारम्भ की गई।

ह्न ओमप्रकाश आचार्य, प्रबंधक पाठशाला समिति

सिद्धचक्र महामण्डल विधान सानन्द सम्पन्न

1. विदिशा (म.प्र.) : यहाँ श्री शीतलनाथ दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर किला अन्दर में अष्टाह्निका महापर्व के शुभ अवसर पर दिनांक 19 नवम्बर से 26 नवम्बर, 2004 तक श्री मूलचन्दजी अजितकुमारजी मोदी परिवार द्वारा सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रात: अभिषेक, पूजन-विधान के पश्चात् जयपुर से पधारे युवा विद्वान पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला तथा रात्रि में आपके प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित जवाहरलालजी बड़कुल विदिशा एवं पण्डित विरागकुमारजी शास्त्री जबलपुर के भी प्रवचनों का लाभ उपस्थित साधर्मीजनों को प्राप्त हुआ। सायंकाल जिनेन्द्रभक्ति तथा रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित विरागजी शास्त्री, जबलपुर के सान्निध्य में पण्डित लालजीरामजी, डॉ. विनोदजी शास्त्री, डॉ. मुकेशजी शास्त्री, श्री शशांकजी जैन जबलपुर और श्री राजकुमारजी जैन (प्रिंस) द्वारा सम्पन्न कराये गये। अन्तिम दिन जिनेन्द्र शोभायात्रा निकाली गई तथा दिल्ली से आये हुए पंचकल्याणक रथ **कल्याणवर्धिनी** का भव्य स्वागत किया गया। **ह्न डॉ. राजेश शास्त्री**

2. सोलापुर (महा.) : यहाँ श्री भगवान आदिनाथ दि. जैन बुबणे मन्दिर, सोलापुर में श्री हर्षवर्धन सुभाषचन्द्र बुबणे द्वारा सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर दोनों समय विदुषी डॉ. विजयाताई गोसावी, मुम्बई के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य विधानाचार्य पण्डित प्रशान्तकुमारजी मोहरे शास्त्री, सोलापुर द्वारा कु.ऋजुता शाह व कु. पूजा शाह की सहायता से कराये गये। सायंकाल जिनेन्द्रभक्ति एवं रात्रि में विभिन्नप्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुए। **ह्न चारूकिर्ति शिरसोडे**

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

27 से 31 दिसम्बर	**देवलाली**	**विधान एवं शिविर**
08 से 09 जन.,05	**मुम्बई (कांदीवली)**	**डॉक्टरों का सम्मेलन**
07 से 13 फर.05	**दिल्ली**	**पंचकल्याणक प्रतिष्ठा**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) दिसम्बर (प्रथम) 2004
J. P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए. जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी,** शास्त्री
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127